इकाई 5 मैथिलीशरण गुप्त और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 जीवन और साहित्य (जीवन परिचय, रचनाएँ)

5.2.1 युगीन परिवेश और भारतीय नवजागरण

5.2.2 आधुनिक हिंदी काव्य चेतना

5.3 भाव पक्ष

5.3.1 अतीत का आधार (इतिहास बोध)

5.3.2 नारी सम्मान की भावना

5.3.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

5.3.4 राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

5.4 संरचना शिल्प

5.4.1 काव्य भाषा

5.4.2 काव्य-शिल्प

5.5 सारांश

5.6 शब्दावली

5.7 उपयोगी पुस्तकें

5.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- गुप्तजी के जीवन और उनकी रचनाओं के बारे में बता सकेंगे;
- हिंदी नवजागरण के उद्भव और विकास के कारणों को बता सकेंगे;
- आधुनिक हिंदी काव्य चेतना के विकास को समझ सकेंगे;
- राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों के विषय में बता सकेंगे;
- गुप्तजी के काव्य में हिंदी नवजागरण की चेतना के विकास को समझा सकेंगे;
- गुप्तजी की राष्ट्रीय भावना और सामाजिक चेतना की व्याख्या कर सकेंगे;
- गुप्तजी की मानवतावादी दृष्टि का वर्णन कर सकेंगे;
- गुप्तजी की नारी सम्मान भावना का वर्णन कर सकेंगे;
- गुप्तजी के खड़ी बोली के विकास में योगदान के बारे में बता सकेंगे;
- गुप्तजी की काव्य विशेषताओं को बता सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 3 में ''द्विवेदी युगीन काव्य : स्वरूप और विकास'' शीर्षक के अंतर्गत हिंदी काव्य का स्वरूप और विकास तथा द्विवेदी जी और उनकी शिष्य मंडली के कवियों के योगदान का अध्ययन किया है। इस इकाई में आप द्विवेदी मंडल के प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का अध्ययन करेंगे। भारतीय नवजागरण के विकास में गुप्तजी का योगदान और उसे निश्चित दिशा में देने में उनकी जो महत्वपूर्ण भूमिका रही है, इसकी चर्चा करेंगे तथा नवजागरण से जिन विभिन्न प्रवृत्तियों का उद्‌भव हुआ, उनकी अभिव्यक्ति गुप्तजी के काव्य में किस रूप में हुई है। गुप्तजी के काव्य में युग-चेतना तीन स्तरों पर अभिव्यक्त हुई है। प्रथम उनके अतीत गौरव-गान में, दूसरे गांधीवादी विचारों की प्रस्तुति में और तीसरे मानवतावादी धरातल पर विश्व राज्य की कल्पना में।

अतीत गौरव गान के द्वारा गुप्तजी ने राष्ट्रीय चेतना को जगाने का कार्य किया जिसके लिए पौराणिक, ऐतिहासिक कथानकों का आधार लेकर अतीत के गौरवशाली चित्र को जनमानस के समक्ष साकार किया। जिससे हीनता की भावना से मुक्त होकर स्वाधीन भारत का सुनहरा सपना देखा जाए। राष्ट्रीय आंदोलन को जब महात्मा गांधी का नेतृत्व प्राप्त हुआ तो गांधीवादी विचारों का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। गांधीवादी प्रभाव को ग्रहण करते हुए गुप्तजी ने राष्ट्रवादी चिन्तन को विश्व-व्यापी मानवतावादी आयाम दिया। गांधी जी के सत्य और अहिंसा के सिद्धांत को गुप्तजी ने बीज मंत्र के रूप में ग्रहण किया है। तत्कालीन युग चेतना को स्वर देते हुए समाज में नारी की दयनीय स्थिति के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए साहित्य में उपेक्षित नारियों की वेदना को अभिव्यक्त किया। गुप्तजी ने दबी हुई नारियों में आत्मविश्वास का भाव जगाया है, उन्हें अबला के स्थान पर सबला बनाया है। दलित, किसान, शोषितों की शोचनीय स्थिति पर प्रकाश डालकर उनके उद्धार की आवश्यकता और उनके आर्थिक, सामाजिक अधिकारों की मांग की। उत्पीड़न और शोषण के विरूद्ध उनका काव्य आक्रोश कर उठता है। सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के रूप में सर्व-धर्म समभाव और धार्मिक एकता की आवश्यकता पर ज़ोर दिया । गुप्तजी की साहित्यिक यात्रा राष्ट्रीयता और विश्व मानवता की एक लम्बी यात्रा है। आइए, हम गुप्तजी के काव्य का विस्तार से अध्ययन करें।

5.2 जीवन और साहित्य (जीवन परिचय, रचनाएँ)

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त, सन् 1886 को चिरगांव (झांसी-उत्तर प्रदेश) के एक वैश्य परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम सेठ रामचरण और माता का श्रीमती काशीबाई था। सेठ रामचरण धार्मिक प्रवृत्ति के पुरुष थे। धार्मिक कथा-वार्ता, भजन-पूजन उनका दैनिक नियम था। स्वभावतः गुप्तजी पर भी इस वातावरण का प्रभाव पड़ा। गुप्तजी की आरंभिक शिक्षा झांसी के राजकीय विद्यालय में हुई। परन्तु उनका मन विद्यालय से अधिक घर में रमता था। अतः झांसी से लौटने पर स्वतंत्र रूप से संस्कृत, हिंदी तथा बंगला साहित्य का अध्ययन किया। धीरे-धीरे कथा साहित्य तथा उपन्यास आदि में रूचि बढ़ने लगी। इतिहास, पुराण आदि के साथ संस्कृत के काव्य और नाटकों का भी इन्होंने अध्ययन किया। कालिदास गुप्तजी के अत्यन्त प्रिय कवि थे। अंग्रेज़ी सीखने का प्रयत्न भी किया परन्तु उसमें विशेष गति नहीं रही।

गुप्तजी के पिता की कविता करने में रुचि थी। उन्होंने ''कवितावली'' के अनुकरण पर कुछ सवैये लिखे थे। लिखने के बाद वे मैथिलीशरण गुप्त को पढ़ने के लिए देते, तब गुप्तजी उसे पढ़कर उसमें कुछ संशोधन सुझाते थे, उनके पिता इस पर बहुत हर्षित होते और पुत्र की बात को मानते। तभी से गुप्त जी ने कविता लेखन की प्रेरणा अपने पिता से ग्रहण की। इनके पिता भक्त, कवि, कलाविद् और छन्द-शास्त्र के ज्ञाता थे। इन सबका प्रभाव कवि

के मन पर पड़ना स्वाभाविक था। उन्होंने पन्द्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में ही अपने पिता की काव्य शैली का अनुकरण करना प्रारंभ किया।

गुप्त जी का पारिवारिक जीवन अधिक सुखी नहीं रहा। इनकी दो पत्नियों की असमय मृत्यु हुई। उनकी तीसरी पत्नी सरयू देवी और उनके एकमात्र पुत्र श्री उर्मिलाशरण गुप्तजी हैं, जिन्होंने प्रकाशन आदि का कार्यभार संभाला है। गुप्तजी ने अधिकतर जीवन एकान्त काव्य साधना में रहकर बिताया। उनका स्वभाव संकोचशील होने के कारण सार्वजनिक समारोह आदि से वे दूर ही रहते थे। उन्हें अपने परिवार में सभी प्रकार का मान-सम्मान प्राप्त हुआ। कवि की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर महात्मा गांधी ने उन्हें ''मैथिली काव्य मान'' ग्रंथ भेंट करते हुए ''राष्ट्रकवि'' की उपाधि से सम्मानित किया। 1936 में साकेत के लिए हिन्दुस्तानी एकेडमी पुरस्कार और 1938 में 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्राप्त हुआ। 1946 में ''हिंदी साहित्य सम्मेलन'' ने उन्हें ''साहित्य वाचस्पति'' से अलंकृत किया। 1948 में आगरा विश्वविद्यालय और 1960 में काशी विश्वविद्यालय ने डी. लिट् की मानद उपाधि देकर उन्हें सम्मानित किया। 1952 में गुप्तजी राज्यसभा के सदस्य मनोनीत हुए। 1954 में ''पद्मभूषण'' से उन्हें सम्मानित किया गया। इसी वर्ष 12 दिसंबर 1964 को गुप्त जी का देहान्त हुआ। सुप्रसिद्ध कवि सियारामशरण गुप्त, गुप्तजी के छोटे भाई थे।

रचनाएँ :

मैथिलीशरण गुप्त की काव्य रचनाओं की संख्या 34 के आसपास है। गुप्तजी सततः रूप से 50 वर्षों तक काव्य लेखन करते रहे। मूल काव्य रचनाओं के अलावा, गुप्तजी ने उर्दू, संस्कृत और बंगला के ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद किया है। उनकी संख्या लगभग 9 है।

गुप्तजी के काव्य रचनाओं की सूची :

काव्य संग्रह

1. जयद्रथ
2. रंग में भंग
3. भारत-भारती
4. किसान
5. वैतालिक
6. शकुन्तला
7. पंचवटी
8. अवध
9. स्वदेश संगीत
10. हिन्दू
11. त्रिपथगा
12. गुरुकुल
13 विकटभट
14. झंकार
15. साकेत
16. यशोधरा
17. मंगलधर
18. द्वापर
19. सिद्धराज
20. नहुष
21. कुणालगीत
22. विश्ववेदना
23. काबा और कर्बला
24. अजित
25. प्रदक्षिण
26. अंजलि और अर्घ्य
27 पृथ्वी पुत्र
28. जयभारत
29. दिवोदास
30. राजा और प्रेम
31. विष्णुप्रिया
32. जयिनी
33. रत्नावली
34. लीला
35. उच्छ्वास
36. पद्यप्रबंध
37. पत्रावली

अनुवाद ग्रन्थ

विरहिणी वज्रांगना, मेघनाथ वध, प्लासी का युद्ध, रूबाइयात उमर खय्याम, स्वप्नवासवदत्ता, दूत घटोत्कच, गीतामृत, वृत्र संहार, वीरांगना।

5.2.1 युगीन परिवेश और भारतीय नवजागरण

मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिंदी काव्य जगत् में राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के प्रतिनिधि कवि हैं। उनका संपूर्ण काव्य उस युग के राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना विकास के प्रत्येक चरण में प्रभाव ग्रहण करता गया और हिंदी नवजागरण को अपना योगदान देता रहा।

गुप्तजी के काव्य में व्यक्त युगीन संदर्भों को समझने के लिए उस समय की राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और सामाजिक परिस्थितियों को समझना आवश्यक है। 19वीं शताब्दी में मध्यकालीन सामन्तवादी विचारधारा और जीवन पद्धति के विरोध में नयीं विचारधारा का उदय हुआ। अंग्रेज़ी शासन द्वारा संचालित स्कूलों, कॉलेजों और इसाई मिशनरियों द्वारा पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान और धर्म-दर्शन का प्रचार हो रहा था। इस पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान के आक्रमण से शताब्दियों से कमज़ोर और सोई हुई भारतीय सांस्कृतिक चेतना को जगाया। अपने अतीत को फिर से पहचानने के लिए विवश किया। जागृत भारतीय जनमानस ने यह अनुभव किया कि पश्चिम के विचार और उसकी जीवन-पद्धति में उसके ज्ञान-विज्ञान को छोड़कर ऐसी कोई विशेषता नहीं है जिसको आत्मसात किया जाए। भारतीय आदर्श, रीति-नीति, परंपरा और गौरव के प्रति जनमानस में श्रद्धा उत्पन्न होने लगी और इस अतीत गौरव से भविष्य के लिए शक्ति प्राप्त करना आरंभ किया। पराधीनता के कारण जो आत्महीनता का भाव जनता में आया था वह दूर होकर उनमें आत्मविश्वास पैदा हुआ। इसमें सांस्कृतिक पुनरूत्थान की प्रक्रिया को बल मिला। सांस्कृतिक तथा सामाजिक नवजागरण में सामाजिक सुधारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना द्वारा हिंदु धर्म को रूढ़ियों और आडम्बरों से मुक्त करके उसके शुद्ध रूप से अपनाने का आग्रह किया। प्राचीन परंपराओं से मुक्ति दिलाकर आधुनिकता की ओर ले जाने का उनका प्रयास था। समाज सुधार की दृष्टि से समाज में स्थित असामाजिक प्रथा-परंपराएँ जैसे जातिप्रथा, पर्दा प्रथा, बाल-विवाह, सतीप्रथा का विरोध किया और स्त्री-शिक्षा, विधवा-पुनर्विवाह का समर्थन किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द आदि ने अपने अतीत, साहित्य और संस्कृति के प्रति श्रद्धा और गौरव की भावना जागृत करने का प्रयास किया। विश्व मानव कल्याण के लिए भारतीय सांस्कृतिक उत्थान पर उन्होंने बल दिया। वे यह जान चुके थे कि भारत विश्व कल्याण की भूमिका तब तक नहीं निभा सकता, जब तक उसे राजनीतिक और आर्थिक शोषण से मुक्ति नहीं मिल जाती। स्वामी विवेकानन्द ने धर्म के पुनरूज्जीवन द्वारा कल्याण की भावना का प्रसार किया। नारी जागरण और नारी उद्धार पर बल देने वाले विभिन्न समाज सुधारकों ने नारी जाति के प्रति सम्मान और आदर भाव की आवश्यकता पर विशेष बल दिया। इस सामाजिक, सांस्कृतिक जागरण ने समाज को अन्धकार युग से निकालकर नवीन प्रकाश दिखाने का कार्य किया।

नवजागरण की चेतना का विकास बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया। सन् 1885 में कांग्रेस महासभा की स्थापना, सन् 1905 में बंगाल के विभाजन और देश में चल रहे स्वतंत्रता आंदोलनों के कारण जो जागृति हुई, उसके फलस्वरूप भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर ऊँचा हुआ, जिसकी अभिव्यक्ति प्रथम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य में हुई। भारतेन्दु और उनके मंडल के कवियों ने भारत की पराधीनता और दुर्दशा के प्रति दुःख प्रकट करके भारतीय जनमानस में अंग्रेज़ी राज के विरूद्ध क्षोभ निर्माण किया। आगे चलकर गांधी जी के नेतृत्व में देशव्यापी राष्ट्रीय आंदोलन ने राष्ट्रीय चेतना का रूप लिया। नई चेतना अथवा नवजागरण के फलस्वरूप भारतीय साहित्य के स्वरूप में परिवर्तन हुआ। साहित्य में मानवतावादी दृष्टि का विकास हुआ। कवियों ने अलौकिक और परलौकिक तत्वों से हटकर अपने चारों ओर के वातावरण और परिवेश से अपने काव्य विषय चुनना प्रारंभ किया। देश की मुक्ति के लिए साहित्य के द्वारा जन चेतना जगाने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य में इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात भारतेन्दु और द्विवेदी युग में हो चुका था। द्विवेदी युग के मुख्य कवि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में नवजागरण

से निर्मित सभी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति का क्या स्वरूप है, इसका अध्ययन हम आगे कर रहे हैं।

5.2.2 आधुनिक हिंदी काव्य चेतना

नवजागरण की चेतना ने जिस नवीन साहित्य को जन्म दिय उसका उत्तरोत्तर विकास सर्वप्रथम बंगला साहित्य में दिखाई देता है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हुए प्राचीनता के अनुकरण और पूर्वजों की विरासत का संदेश दिया। सांस्कृतिक चेतना का सर्वप्रथम उद्घोष हिंदी के भारतेन्दु युग के साहित्य में हुआ। हिंदी साहित्य रीतिकालीन श्रृंगारिकता से स्वयं को मुक्त करके दशप्रेम को स्वर देने में सफल रहा। समकालीन परिवेश के प्रति कवि जागरूक हुए और काव्य विषयों का विस्तार हुआ। मातृभूमि-प्रेम, स्वदेश-प्रेम, शिक्षा-प्रचार, नारी-सम्मान की भावना, मानवतावाद काव्य के विषय बनने लगे। देश की आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दुर्दशा पर क्षोभ और रोष प्रकट होने लगा। भारतेन्दु साहित्य का मूल स्वर देशप्रेम था। इस भावना का पूर्ण विकास बीसवीं शती के प्रथम दो दशकों में द्विवेदी युग के साहित्य में दिखाई देता है। भारतेन्दु युग के कवियों ने जहाँ देश की दुर्दशा पर केवल दुःख प्रकट किया था, वहां द्विवेदी युग के कवियों ने स्वतंत्रता प्राप्ति का संकल्प व्यक्त किया और उसके लिए आत्म-बलिदान की भावनाओं को स्वर दिया। अतीत और वर्तमान के बीच की असंगति को दिखाकर नए आदर्शों और भारतीय जीवन के आधाररूपी मूल्यों की स्थापना की। पौराणिक सामग्री और विभिन्न प्रसंगों को लेकर वर्तमान युग के संदर्भ में रखकर उनकी नई व्याख्या करने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य में आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का पूर्ण विकास द्विवेदी युग में ही दिखाई देता है। आधुनिक काव्य चेतना के स्वर जैसेः उपेक्षितों में सर्वप्रथम गूंज उठे थे। इसी युग में मैथिलीशरण गुप्तजी का अविर्भाव हुआ। उनके काव्य में इस काव्य चेतना को सबसे समर्थ और सशक्त वाणी मिली। श्री रामधारी सिंह दिनकर जी ने उनके बारे में कहा है ''पुनरूत्थान'' ने हमारी सारी संस्कृति, संपूर्ण इतिहास और समग्र विश्वास पर जो नया आलोक फेंका, उसकी अधिक से अधिक अभिव्यक्ति सबसे प्रथम मैथिलीशरण गुप्त की कविताओं में ही हुई। इसीलिए, हिंदी में पुनरूत्थान के कवि वे ही माने जाएंगे, ठीक उसी प्रकार जैसे बंगला में पुनरूत्थान के कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर हुए हैं। देश और युग की समस्याओं तथा चुनौतियों को गुप्तजी भली-भाँति जान चुके थे। आप देखेंगे कि गुप्तजी की काव्य रचनाएँ युगीन समस्याओं को अभिव्यक्त करती है। साथ ही, इन समस्याओं के समाधान का मार्ग भी प्रशस्त करती हैं। जन-मानस द्वारा आधुनिक विचारधारा को स्वीकार करने के लिए एक मनोभूमि तैयार करती है।

5.3 भाव पक्ष

5.3.1 अतीत का आधार (इतिहास बोध)

जन-मानस में राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए और वर्तमान दुर्दशा के कारणों को जानने के लिए मैथिलीशरण गुप्त ने अतीत के वैभवशाली भारत का चित्र अपनी कविताओं द्वारा प्रस्तुत किया। हम कौन थे? हम क्या हैं? और क्या होंगे? यह जानने की जिज्ञासा लोगों में उत्पन्न हो और जिससे भारतीय सांस्कृतिक गरिमा और सभ्यता को वे जान सकें और गुलामी की श्रृंखलाओं को तोड़कर एक स्वतंत्र भारत के निर्माण में अपना योगदान दे सकें। गुप्तजी ने अतीत के भव्य और उदात्त चरित्रों को कथाओं के माध्यम से युग की आवश्यकता के अनुसार एक कुशल चित्रकार की भांति नया रूप देकर प्रस्तुत किया। गुप्त जी ने आज के मान्य इतिहास से नहीं बल्कि मुख्यतः रामायण, महाभारत और पौराणिक कथाओं के प्रसंगों का चुनाव किया है। स्वयं गुप्तजी ने इस बात पर बल देकर कहा है - ''इस देश में असंख्य आदर्शजन हो गए हैं। उनकी धार्मिकता, वीरता, उदारता, परोपकारिता और न्यायप्रियता एवं शील और सौजन्य आदि गुणों से इतिहास आलोकित

हो रहा है। उनके ऊपर अनेक काव्य नाटक आदि लिखे जा सकते हैं। ऐसे काव्य चरित्रगठन में सहायक ही नहीं होते बल्कि उसके कारण होते हैं'' (कविता किस ढंग की हो- मैथिलीशरण गुप्त)

गुप्तजी अतीत की वैभवशाली परंपरा में विश्वास रखते थे। उनका मानना था कि भारत की प्राचीन सभ्यता ही जनता को वह सन्देश, वह प्रेरणा दे सकती है, जिससे राष्ट्रीय भावना का निर्माण हो सके। हमारा वर्तमान उज्वल बनेगा।

ज्यों ज्यों प्रचुर प्राचीनता की खोज बढ़ती जाएगी।
त्यों त्यों हमारी उच्चता पर ओप चढ़ती जाएगी।

(भारत-भारती, पृ. 72)

उन्होंने अपने काव्य ''रंग में भंग'' में पूर्वजों की बड़ाई गाने को कहा, ''जयद्रथ वध'' में अपने पूर्वजों के शील और सौजन्य आदि गुणों से शिक्षा लेने को कहा।

निज पूर्वजों के सद्गुणों को यत्न से मन में धरो।
सब आत्म परिभव तज निज रूप का चिन्तन करो।
निज पूर्वजों के सद्गुणों का गर्व जो रखती नहीं।
वह जाति जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं।

(भारत-भारती, पृ. 160)

गुप्तजी मानते थे कि पराधीनता के सुप्त वातावरण में अतीत की जय ही जागरण उत्पन्न कर सकेगी। स्वयं गुप्तजी ने ''मौर्य विजय'' की भूमिका में कहा है- ''यदि सौभाग्य से किसी जाति का अतीत गौरवपूर्ण हो तो उस पर अभिमान करें तो उसका भविष्य भी गौरवपूर्ण हो सकता है।'' (मौर्य-विजय की भूमिका)

इसीलिए उन्होंने अपनी कृतियों में अतीत चित्रण को अधिकाधिक सशक्त बनाने का प्रयत्न किया। लेकिन अतीत चित्रण को महत्व देते हुए भी गुप्तजी इस बात से पूर्ण रूप से सचेत थे कि केवल अतीत चित्रण से उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी, बल्कि युगानुसार आने वाले परिवर्तन को भी वे सहज रूप से स्वीकार कर रहे थे। वे कहते हैं-

''प्राचीन बातें ही भली हैं यह विचार अलोक है,
जैसी अवस्था हो, जहां वैसी व्यवस्था ठीक है।''

(भारत भारती, पृं. 166)

गुप्तजी का मानना है कि युगीन परिस्थितियों के अनुरूप अपने विचारों को बदलने से बहुत सी समस्याएँ दूर हो सकती हैं। इसीलिए युगीन मूल्यों के साथ उन्होंने प्राचीन गौरवपूर्ण तत्वों का संतुलन किया है। अतीतचित्रण से संबंधित गुप्तजी की मान्यताओं को जन्म देने में युगीन परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण रही हैं। इसके अतिरिक्त गुप्तजी की आस्तिकता और निष्ठा ने उनके अतीत प्रेम और नैतिक चेतना को दृढ़ बना दिया और अतीत चित्रण की पृष्ठभूमि में उन्होंने नवजागरण की विभिन्न प्रवृत्तियों का चित्रण किया।

गुप्तजी की अतीत के आधार पर लिखी गई रचनाएं इस प्रकार हैं-

''साकेत'', ''पंचवटी'', ''प्रदक्षिणा'', ''जयद्रथ वध'', ''सैरन्ध्री'', ''बकसंहार'', ''नहुष'', ''हिडिम्बा'', ''युद्ध'', ''यशोधरा'', शकुन्तला'' आदि। रामायण को आधार बनाकर लिखी गई रचना ''साकेत'' महत्वपूर्ण रचना है। यह मुख्य रूप से मानव जीवन और मानव मूल्यों का काव्य है। गुप्तजी ने प्रचलित रामकथा को युगीन परिस्थितियों के अनुसार नया रूप प्रदान करने का प्रयत्न किया है। इसके लिए उन्होंने प्राचीन कथा को कई नूतन

उद्‌भावनाओं से सजाया है। परंपरा की लीक पर चलते हुए भी कथा के स्वाभाविक क्रम में उन्होंने परिवर्तन अवश्य दिखाया है।

गुप्तजी ने वर्तमान युग की दैन्य दशा को सुधार और स्वाधीनता की आकांक्षा व्यक्त की है। तत्कालीन युग की परिस्थिति के प्रति किसी भी प्रकार से हीन भावना में नहीं रहे बल्कि दश के गौरव को बढ़ाने के लिए कर्तव्य-भावना से प्रेरित होकर जनता कार्य करें इस भावना की अभिव्यक्ति गुप्तजी की ''द्वापर'' रचना में इस प्रकार हुई है-

अपने युग को हीन समझना आत्महीनता होगी,
सजग रहो, इससे दुर्बलता और हीनता होगी।
जिस युग में हम हुए वही तो अपने लिए बड़ा है,
अहा! हमारे आगे कितना कर्मक्षेत्र पड़ा है।

(मैथिलीशरण गुप्त- ''द्वापर'', पृं. 52)

गुप्तजी की अतीत भावना के पीछे यह धारणा है कि हमारा अतीत अत्यन्त गौरवशाली और उदात्त रहा है। हमारे पूर्वजों ने भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति की ऊँचाइयों को छुआ था, और विश्व के लिए एक महान् आदर्श उपस्थित किया था। वर्तमान स्थिति में और भविष्य के लिए भी हम उनसे मूल्यवान प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं जिसके आधार पर मानव-संस्कृति को उज्वल बना सकते हैं। इसीलिए वे कहते हैं-

जिनका कुछ भी न था अतीत,
गावें क्या वे उसके गीत
भूलें हम क्यों उसकी याद
जिसमें है अपना आह्‌लाद।
वही करेगा हमें सचेत
और वही देगा संकेत,
दे सकता है वही प्रबोध
और हमें जीवन का शोध

(हिन्दू, पृ. 51-52)

पुनर्जागरण युग के और उसके बाद के अनेक कवियों में अतीत के बारे में इस प्रकार की भावना निहित है। इन कवियों ने अतीत के पौराणिक और ऐतिहासिक सन्दर्भों के आधार पर नवयुग के अनुरूप मूल्य-आदर्शों की बात कही है। इस संदर्भ में कवि दिनकर ने कहा है-

''पौराणिक कथाओं पर इस आंदोलन ने नयी आभा बिखेरी है, एवं इसके आलोक में
हमारे इतिहास की अनेक घटनाएँ और अनेक नायक नयी ज्योति से जगमगाने लगे हैं।''

(दिनकर-मैथिलीशरण गुप्त -अभिनन्दन ग्रंथ)

नये युग की आवश्यकताओं के प्रति गुप्तजी पूरी तरह सजग हैं। नये युग की व्यवस्था एक अपरिचित आधार पर खड़ी न होकर, गत युग की अच्छाइयों की आधारशिला पर खड़ी हो। इसीलिए आज के युग में ''रामराज्य'' की स्थापना भी उन्हें नये युग की आवश्यकताओं के अनुकूल लगती है-

आज के योग्य एक अविभाज्य,
विश्व को मिले राम का राज्य
(विश्ववेदना, पृं. 5)

5.3.2 नारी सम्मान की भावना

भारतीय नवजागरण और सुधारवादी आंदोलनों के कारण समाज में नारी की अपमानस्पद और उपेक्षित स्थिति के बारे में पहली बार विचार किया जाने लगा। शताब्दियों से उपेक्षित और प्रताड़ित नारी को घर और समाज में उचित सम्मान मिले, देश के स्वतंत्रता संग्राम और विकास में उसका समान सहयोग रहे। इस भावना से नारी जाति के लिए सदियों से चली आ रही कुप्रथाओं और रूढ़ि-रीतियों का जोरदार विरोध होने लगा। राजा राममोहन राय ने नारी जाति के लिए अपमानास्पद और अभिशाप जैसी सती प्रथा समाप्त करने के लिए आंदोलन किया। बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, पर्दा-प्रथा का विरोध और विधवा-विवाह का समर्थन ब्रह्म समाज, आर्यसमाज द्वारा चलाए गए आंदोलनों ने किया। मध्यकालीन सामंतवादी समाज में नारी को केवल भोग की वस्तु माना जाता था। उसका कार्यक्षेत्र केवल उसका घर था और उसे शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करने का अधिकार भी नहीं था। इस संकीर्ण मानसिकता के कारण नारी का कार्यक्षेत्र अत्यंत सीमित था। आधुनिक युग की इस विचार-दृष्टि में नारी की इस स्थिति को समाज और देश के लिए, अत्यन्त हानिकारक माना। नारी की स्वतंत्र अस्मिता, कार्य करने की कुशलता और बुद्धिमता को पहचानने का प्रयास किया गया। देश के विकास में सहयोग देने वाले महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उसे पहचाना गया।

गुप्तजी की आधुनिक काव्य चेतना पर नवजागरण की नारी संबंधी विचारधारा का बहुत ही गहरा और व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। देश की समकालीन स्थिति में नारी की शोचनीय स्थिति पर दुःख व्यक्त करते हुए वे नारी-शक्ति की महत्ता को इस तरह व्यक्त करते हैं-

> अनुकूल आद्या शक्ति की सुखदायिनी जो स्फूर्ति है,
> सद्धर्म की जो मूर्ति और पवित्रता की पूर्ति है,
> नर-जाति की जननी तथा शुभ शान्ति की स्त्रोतस्वति
> हा दैव! नारी जाति की कैसी यहाँ है दुर्गति।''
>
> (भारत भारती, पृं. 149)

गुप्तजी ने नारी को उदात्त दैवी जैसा रूप देकर शक्ति और पवित्रता, सात्विकता के रूप में प्रतिष्ठित किया है। परन्तु केवल पूज्य भाव जगाने की वह घड़ी नहीं थी बल्कि नारी को सहयोगिनी के रूप में स्वीकार करना समय की आवश्यकता थी। गुप्तजी ने ''साकेत'', ''यशोधरा'', ''विष्णुप्रिया'', रत्नावली जयिनी काव्य रचनाओं में नारी को उच्च और मधुर प्रेरणामयी सहयोगिनी के रूप में दिखाने का प्रयास किया है। हिंदी साहित्य के काव्य क्षेत्र में जो कुछ ऐसे नारी पात्रों की उपेक्षा हो रही थी, जिनके त्याग, उदारता और वेदना की अब तक कहीं भी चर्चा नहीं हुई थी। गुप्तजी ने ''साकेत'' में ''उर्मिला'' और ''यशोधरा'' में राहुल जननी की वेदना को स्वर देकर नारी के अस्तित्व बोध को अभिव्यक्त किया है।

गुप्तजी ने पौराणिक कथा संदर्भ लेकर नारी की गरिमामयी, तेजस्वी प्रतिभा प्रस्तुत की, जो समय की माँग थी। उपेक्षिता उर्मिला की अनकही विरह-वेदना, त्याग, सामंजस्य और दृढ़ता को साकेत में प्रथम वाणी मिली है। राम-सीता के साथ वन जाने के लिए लक्ष्मण को योगी बनाने में उर्मिला की दृढ़ता ही कारण रही है। जाग रहा है यह कौन धर्नुधर, जबकि भुवन भर सोता है भोगी कुसुमायुध योगी-सा, बना दृष्टिगत होता है। गुप्तजी ने नारी के व्यक्तित्व के दो पक्षों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया। पहला पक्ष है, नारी का और दूसरा पक्ष है नारी की स्वतंत्र सत्ता और महत्ता।

ये दोनों ही पक्ष नारी जीवन को सफल और उज्वलल बना सकता है यदि उसे पुरुष का सहयोग प्राप्त होता है। यदि यह सहयोग नहीं मिलता है तो नारी के पत्नीत्व और स्वतंत्र सत्ता के बीच तनाव निर्माण होता है। गुप्तजी के ''साकेत'' की नायिका उर्मिला में इस

तनाव का अभाव है, क्योंकि लक्ष्मण का उसे अनुकूल सहयोग प्राप्त है। उर्मिला की अनुमति से ही लक्ष्मण वन को गए थे, परन्तु यशोधरा, विष्णुप्रिया और रत्नावली में वह नहीं है। यशोधरा के गौतम और विष्णुप्रिया के चैतन्य महाप्रभु पत्नी को बताये बिना, आज्ञा लिए बिना सत्य की खोज में निकल पड़े थे

साकेत के एक विनोद प्रसंग में उर्मिला जब लक्ष्मण से कहती है कि मैं अबला हूँ तो लक्षमण संपूर्ण नारी जाति को संबोधित करके कह उठते हैं-

''अवस-अबला'' तुम? सकल बल वीरता,
विश्व की गम्भीरता, ध्रुव-धीरता,

(''साकेत'', पृष्ठ 23)

''उर्मिला'' विरह व्यथिता होकर भी स्वाभिमान और वीर भावना से ओत-प्रोत है। सीता हरण और लक्ष्मण-शक्ति के प्रसंग को हनुमान से सुनकर जब सभी साकेतवासी रावण से युद्ध करने के लिए निकल पड़ते हैं और सीता को कारागार से मुक्त करके उसके अपमान का बदला लेने के लिए शत्रुघ्न सोने की लंका लूटने के लिए प्रजाजनों को आदेश देते हैं, तब उर्मिला माथे पर सिंदूर लगाकर और हाथ में भाला लेकर साक्षात दुर्गा का वेश धारण करके गरजती हुई उनके सामने आकर तेजस्वी वाणी में घोषणा करती है-

नहीं, नहीं पापी का सोना
यहां न लाना, भले सिंधु में वहीं डुबोना,
जाते हो तो मान हेतु ही तुम सब जाओ,
विंध्य-हिमाचल-भाल भला। झुक जाय, धीरो,
चन्द्र-सूर्य-कुल-कीर्ति-कला रूक जाय न वीरो।

इस तरह ''उर्मिला'' सैनिकों में अपनी मातृभूमि के प्रति अटूट श्रद्धा, अपूर्व भक्ति और असीम प्रेम जाग्रत करती है। यही है उर्मिला का स्वाभिमानी, शक्तिरूपा और वीरांगना का रूप। आधुनिक युग में नवजागरण की चेतना के कारण नारी स्वातंत्र्य और नारी की महत्ता को मानने जैसी विचारधारा का प्रसार हुआ। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करने के लिए नारी को प्रोत्साहन दिया और उसे स्वावलम्बी बनाने की प्रेरणा नारी जागृति के लिए कार्य कर रही संस्थाओं ने दी। ''साकेत'' में सीता के इन उद्‌गारों में नारी के स्वतंत्र और स्वावलम्बी जीवन की झलक मिलती है-

''औरों के हाथों यहाँ' नहीं पलती हूँ
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थ्य शुक्ति फलती हूँ।
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूँ।
तनु-लता-सफलता-स्वाद आज ही आया,
मेरी कुटिया में राज भवन मन-भाया।''

''यशोधरा'' गुप्तजी की दूसरी महान कृति है। जिसमें गौतम बुद्व, यशोधरा तथा पुत्र राहुल की कथा को विस्तार दिया गया है।

यशोधरा की गौतम के महान् लक्ष्य के प्रति पूर्ण सहानुभूति थी, परन्तु पति द्वारा निद्रावस्था में उसकी अनुमति लिए बिना गृह त्याग करने से यशोधरा अपने नारीत्व को तिरस्कृत और अपमानित अनुभव करती है, गौतम ने उसे सहधर्मिणी के सहयोग का अवसर ही नहीं दिया- नारी को उन्होंने भी सिद्धि मार्ग की बाधा माना, यशोधरा की वेदना उसके शब्दों में फूट पड़ी है-

सिद्धि-हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात,
पर चोरी-चोरी गये, यही बड़ा व्याघात,
सखि, वे मुझसे कह कर जाते,
कह, तो क्या वे मुझको अपनी पथ-बाधा ही पाते?

(यशोधरा पृ. 24)

यशोधरा के मन में वेदना के साथ ही नारी-जाति के अस्तित्व के प्रति जागरूकता का भाव दिखाई देता है। वह कह उठती है-

सिद्धि-मार्ग की बाधा नारी फिर उसकी क्या गति है,
पर उनसे पूछूँ क्या जिनको मुझसे आज विरति है,
अर्ध-विश्व में व्याप्त शुभाशुभ मेरी भी कुछ मति है,
मैं भी नहीं अनाथ, जगत् में मेरा भी प्रभु पति है।

(यशोधरा, पृ. 38)

सिद्धार्थ के निर्वाण हेतु चले जाने के बाद यशोधरा शोक में डूब जाती है, फिर भी जन-कल्याण हेतु गए अपने पति के उच्च संकल्प के लिए वह त्यागमयी भावना से कह उठती है-

जायें, सिद्धि पायें वे सुख से,
दुःखी न हों इस जन के दुःख से।

यशोधरा के साथ उसका पुत्र राहुल भी है, पति की अनुपस्थिति में माता तथा पिता दोनों रूपों का यशोधरा को निर्वाह करना पड़ता है। इसीलिए यशोधरा के विरह में वेदना के साथ-साथ गम्भीरता आ गई है। वह अपनी व्याकुलता में उत्तरदायित्व को कभी नहीं भूली। नारी जीवन के उस गम्भीर पक्ष, जिसमें तप, अटल विश्वास, पारिवारिक उत्तरदायित्व और त्याग है, यशोधरा ने उसे सहज रूप से स्वीकार किया। इसीलिए वह अपने ससुर को सांत्वना देने की क्षमता रखती है-

''तात सोचो, क्या गये वे इसी अर्थ हैं।
खोज हम लायें उन्हें, क्या वे असमर्थ हैं?

यशोधरा की तापसी वृत्ति को अंगीकार करने के पीछे इस असार संसार के मोह से मुक्त होकर संसार को मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले गौतम की पत्नी होने की योग्यता को सिद्ध करने की आकांक्षा दिखाई देती है। उनका यह तप अंत में सफल हुआ। गौतम भगवान बुद्ध बनकर उसके ''इसी आंगन में'' लौटकर आएँ, जहाँ से वे उसे छोड़कर गए थे और यशोधरा ने अपने जीवन के तप का फल प्राप्त कर लिया। यहाँ यशोधरा का मानिनी रूप अडिग दिखाई देता है। वह जानती है कि-

''यदि वे चल आये हैं इतना
तो दो पद उनको है कितना
क्या भारी वह, मुझको बिताना
पीठ उन्होंने फेरी
ऐ मन! आज परीक्षा तेरी।''

यशोधरा इस परीक्षा में सफल हो जाती है। गौतम बुद्ध स्वयं आते हैं और कहते हैं-

''मानिनी, मान तजो लो, रही तुम्हारी बान।
दानिनि, आया स्वयं द्वार पर यह तत्र भवान।''

और यशोधरा ने अपने जीवन के तप का फल प्राप्त कर लिया। यशोधरा ने उस भिक्षु-शिरोमणि को अपनी गोद का अमूल्य रत्न, पुत्र राहुल को देकर नारी के त्याग का अभूतपूर्व आदर्श उपस्थित कर दिया। भगवान बुद्ध ने गोपा अर्थात् यशोधरा के नीरव-तप को और उनके महत्व को स्वीकार किया और केवल गोपा का ही नहीं, उसके त्याग से समस्त नारी-जाति की महत्ता को स्वीकार करके गोपा का मस्तक ऊँचा कर दिया-

''दीन न हो गोपे, सुनो, हीन नहीं नारी कभी
भूत-दया-मूर्ति वह मन से शरीर से।
क्षीण हुआ वन में क्षुधा से मैं विशेष जब
मुझको बचाया मातृजाति ने ही खीर से।
आया जब मार मुझे मारने को बार-बार
अप्सरा-अनीकिनी सजाये हेम-हीर से।
तुम तो यहाँ थीं, धीर ध्यान ही तुम्हारा वहाँ
जूझा, मुझे पीछे कर, पंचशर वीर से।''

गुप्तजी ने यशोधरा में भारतीय नवजागरण से विकसित हुए नवीन विचारों को अभिव्यक्ति दी है। देवत्व के स्थान पर मानव के महत्व को प्रतिपादित करना इस कृति का मुख्य हेतु था। अन्य ग्रंथों के समान सिद्धार्थ को प्रमुखता न देकर गुप्तजी ने काव्य को यशोधरा पर केन्द्रित रखा है, क्योंकि नारी की प्रतिष्ठा समय की माँग थी।

गुप्तजी द्वारा नारी की प्रतिष्ठा को स्थापित करने की इसी काव्य-धारा की अगली कृति ''विष्णुप्रिया'' और ''जयिनी'' है। यह रचना भी गुप्तजी के उसी सिद्धांत की बात करती है, जिसमें आदर्श नारियों के लिए त्याग, तपस्या और पतिव्रता होना आवश्यक माना गया है। हालांकि यह बात आधुनिक विचारों की अपेक्षा कुछ पारंपरिक अधिक लगती है। ''विष्णुप्रिया'' सामान्य गृहिणी है। मध्यकालीन भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु के गृह त्याग के कारण उनकी पत्नी विष्णुप्रिया को जो व्यथा-वेदना सहनी पड़ी उसी का रेखांकन इस कृति में किया गया है।

चैतन्य महाप्रभु जब विष्णुप्रिया से प्रेम-धर्म के प्रसार हेतु गृह त्याग के लिए आज्ञा माँगते हैं तो उस समय विष्णुप्रिया समस्त नारी समाज की विवशता का प्रतिनिधित्व करती हुई कहती है-

''तो क्या करूँ कर ही क्या सकती हूँ और मैं
रो रोकर मरना ही नारी लिखा लाई है।''

परन्तु वह अपने पति की भर्त्सना भी करती है। यह कह कर-

''कौन योग पूर्ण होगा त्याग कर मुझको?
धर्म के विरूद्ध ही तुम्हारा यह कर्म है।''

(विष्णुप्रिया, पृं. 42)

केवल इतना कह कर विष्णुप्रिया चुप नहीं रहती है तो सांसारिकता के मोह से दूर भाग रहे अपने पति के लिए आक्रोश भरा व्यंग्यपूर्ण उलाहना भी देती है। परन्तु वह स्थिति का सामना करने के लिए समर्थ भी है। स्वजनों के सहारे बैठकर वह अपना निर्वाह नहीं करती बल्कि स्वयं श्रम करके अपना और पति का पालन-पोषण करती है। स्वाभिमानी विष्णुप्रिया स्वयं श्रम करके जीवन जीना चाहती है।

'' कर लेंगे हम किसी प्रकार
इतना श्रम जिससे हम दोनों, न हों किसी पर भार''।

चैतन्य महाप्रभु के लौट आने के बाद विष्णुप्रिया अपना सारा दुःख भुलकर उनका प्रेमपूर्वक स्वागत भी करती हैं और महाप्रभु के कहने पर भगवान का ध्यान भी करती है। परन्तु यहीं विष्णुप्रिया चैतन्य महाप्रभु के राजा द्वारा दी गई भेंट को स्वीकार करने पर, विद्रोहिणी के रूप में कह उठती है-

''राज-समादर के लिए ही क्या गए हैं वे?

(विष्णुप्रिया, पृ. 83)

और इस बात को स्वीकार करते हुए महाप्रभु ने विष्णुप्रिया का आभार व्यक्त किया-

''हाय! ''प्यारी विष्णुप्रिये!'' बोले हँसकर ही,
तुम अवरोधिनी नहीं, अब हो प्रबोधिनी।''

(विष्णुप्रिया, पृ. 84)

5.3.3 मानवतावादी दृष्टिकोण

आधुनिक युग में मनुष्य का विश्वास अलौकिक शक्तियों पर से हटता गया क्योंकि विज्ञान ने मनुष्य के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि अलौकिक शक्ति एक कल्पना मात्र है। आस्था का केन्द्र मनुष्य ही है। मनुष्य स्वयं अपना भाग्य-विधाता है, सृष्टि के क्रम-विकास में उसका स्थान सर्वश्रेष्ठ है। यही विश्वास आधुनिक मानवतावादी विचारधारा की मूल चेतना है।

गुप्तजी के काव्य पर इस मानवतावादी विचारधारा का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। उनके काव्य के विषय अधिकार पौराणिक कथानकों पर आधारित हैं विशेष रूप से ''नहुष'' और ''दिवोदास'' काव्य इसी दृष्टिकोण को स्वष्ट करते हैं जिसमें मानव के स्वावलम्बी बनने और विकास की ओर बढ़ने के संकल्प को व्यक्त किया है। ''लीला'' नामक काव्य में विश्वामित्र का यह कथन-

अमर जो न कर सके उसे नर कर सकते हैं
व्रत साधन पर अमर भला कब मर सकते हैं?

(लीला, पृं. 24)

विकास के पथ पर आगे बढ़ने का संकल्प लिए मानव आज उस संकल्प की पूर्णता की ओर अग्रसर है। मानवीय मूल्यों की स्थापना और उनके अनुसार चलने की कटिबद्धता मानव निभा रहा है। ''द्वापर'' में उग्रसेन कर रहा है-

सच पूछो तो ऐसा अद्‌भुत अपना यह मानव ही,
कभी देव बन जाता है तो और कभी दानव भी।
मैं कहता हूँ यदि मनुष्य ही बने मनुष्य हमारा,
तो कट जाए देव-दैत्यों का कलह-कलुष यह सारा।

(द्वापर, पृं. 103)

समाजिक धरातल पर मनुष्य और मनुष्य के बीच भेद उत्पन्न करने वाली सभी पुरातन रूढ़ियों और संकीर्ण मानसिकताओं को नष्ट करके मनुष्य को स्वाभिमानपूर्वक खड़े होने का साहस मानवता ही दे सकती है। ''जयभारत'' काव्य के परीक्षा प्रसंग में कौरवों और पाण्डवों के शस्त्र कौशल की परीक्षा के उत्सव का वर्णन है। इस उत्सव में सबको चुनौती देकर परीक्षा देने के लिए जब कर्ण उपस्थित होता है तो उसका अपमान करने के उद्‌देश्य से भीम उससे कुल और वर्ण का परिचय माँगता है तब कर्ण के मुख से मनुष्यत्व के गौरव को व्यक्त करने वाला सत्य इस तरह फूट पड़ता है-

मैं मनुष्य हूँ, और वर्ण सब देख रहे हैं,
पूछो उनसे लोग मुझे क्या लेख रहे हैं।

(जयभारत, पृं. 63)

मनुष्य की श्रेष्ठता उसके किस जाति या वर्ण में जन्म लेने के आधार पर नहीं उसके शौर्य, पराक्रम और योग्यता के बल पर निर्धारित होनी चाहिए। गुप्तजी ने मनुष्य के श्रेष्ठत्व को पहचानने की एक नई दृष्टि देने का प्रयास किया है। जातिभेद का विरोध करते हुए मनुष्यत्व की श्रेष्ठता को ''गुरुकुल'' काव्य में वे इस रूप में व्यक्त करते हैं-

''हिन्दू हो या मुसलमान हो नीच रहेगा फिर भी नीच
मनुष्यत्व सबसे ऊपर है मान्य महीमण्डल के बीच''।

(गुरुकुल, पृं. 37)

गुप्तजी ने अपने काव्य में जातिभेद, वर्णभेद जैसी सामाजिक बुराइयों का विरोध किया और इन बुराइयों के कारण मनुष्य-मनुष्य के बीच जो दरार पड़ी थी, उस दरार को मिटाने के प्रयास स्वयं मनुष्य ही करे इस उद्देश्य को पूर्ण करने हेतु गुप्तजी ने अपने ''द्वापर'', ''गुरुकुल'' काव्य संग्रहों की रचना की थी। मानवतावादी दृष्टिकोण से ही गुप्तजी ने नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा को बढ़ाने हेतु ''यशोधरा'', ''साकेत'', ''विष्णुप्रिया'' काव्यों की रचना की। इन काव्यों के प्रमुख नारी पात्र त्याग, दया, करूणा, अहिंसा, आदि बौद्ध धर्म के तत्वों को अपनाते हुए मानवता की स्थापना के लिए कार्यशील दिखाई देते हैं। बौद्ध धर्म के तत्व मानवतावाद की स्थापना के मूल तत्व माने गए हैं। गुप्तजी का विश्वास था कि अनेक विसंगतियों और त्रुटियों के बावजूद विश्व का विकास होगा, क्योंकि मनुष्य ही इस विकास के केन्द्र में है। कुन्ती द्वारा यह विश्वास वे प्रकट करते हैं-

''होगा इस विश्व का विकास जो अब भी।
नर से होगा वह, जैसा हुआ अब भी।।
आते हैं चढ़ाव उतार तथा आवेंगे।
तो भी हम लोग सदा बढ़ते ही जायेंगे।।

उस समय विश्व को महायुद्ध एक शाप की तरह ग्रस्त किए हुए था। दोनों महायुद्धों से संपूर्ण विश्व, दानवीय प्रवृत्तियों का तथा भीषणता का शिकार हो चुका था। गुप्तजी ने महायुद्ध की उस भयावहता को देखते हुए युद्ध के विरोध में शांति का, विषमता के मध्य समता का काव्य लिखकर दानवता के विरूद्ध मानवता का संदेश देने का भरसक प्रयास ''विश्व वेदना'' जैसा काव्य लिखकर किया। अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धाओं से त्रस्त आधुनिक युग की पीड़ा की अनुभूति से कवि हृदय कराह उठता है-

''बढ़ाकर दो देशों में द्वेष
बेच दोनों को वस्तु विशेष
लूटता एक तीसरा देश
वाणिज्य में क्यों लज्जा-लेश

राज्य पूँजीपति का ही आज
नहीं कुछ उसके लिए अकाज
लुब्ध लंपट वंचक वाचाल
चले जो जितना गहरी चाल
बिछावे कूट कपट के जाल
वही उतने नीतिज्ञ विशाल
धनी हो जिसके कंस नृशंस
न हो धरा धाम क्यों ध्वंस।''

द्वितीय महायुद्ध के बाद विजयोत्सव मना रहे ब्रिटेन के नवयुवकों को संबोधित करके जो बात एच जी. वेल्स ने कही थी, वही ''बंगाल का अकाल'' नामक कविता में गुप्तजी ने व्यक्त की है-

''शिशु जहाँ शुष्क स्तनी माँ को-
अधीर पुकारते हैं।
एक मुट्ठी अन्न पर उनको बुभुक्षित करते हैं।
आँसुओं के रूप में जीवन जहाँ राज गारते हैं।
एक के पर दूसरों के अन्तरंग उधारते हैं।।
रक्त रंजित हो यहाँ तो साँझ हो चाहे सबेरा।
क्या यही संसार मेरा''।

भूख से बिलखती जनता की आवाज़, कराह, क्रन्दन, कोलाहल, द्वेष, वैषम्य इन सभी भावनाओं की संमिश्र अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है। द्वितीय महायुद्ध से निर्माण हुई स्थिति के कारण गुप्तजी की मानवतावादी दृष्टि के पीछे वस्तुतः सामाजिक चेतना मुख्य रूप से दिखाई देती है। इसी प्रकार, ''जयिनी'' काव्य रचना में समाजवादी विचाराधारा के मानवतावादी तथ्य स्पष्ट हैं।

''खाता दूसरा है, कमाता श्रमजीवी है'' अथवा ''महाजन पूँजीपति बनके अपने सुख भोग के लिए सौ-सौ का सुख भोग लूटता है। कुत्ते एक ओर मलाई सूँघते हैं तो बच्चे दूसरी ओर भूख से ऊँघते हैं।

इस तरह, गुप्तजी का काव्य मानवतावादी दृष्टि का दस्तावेज है। कर्म और कर्त्तव्य के नए धरातल को प्रस्तुत करके मनुष्यत्व को नया आयाम, नया आदर्श और नयी अर्थवत्ता प्रदान करता है।

5.3.4 राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

देश में स्वतंत्रता आंदोलन एवं राष्ट्रीय भावना का उदय पुनरूत्थान के वैचारिक आंदोलन के प्रचार रूप में हुआ। गांधी जी ने इस आंदोलन को नये आयाम प्रदान किए, इसे व्यापक, जन-जागरण, समाज-सुधार, आर्थिक स्वावलम्बन एवं नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों से जोड़ा। अतः अहिंसा, सत्याग्रह, अछूतोद्धार, मानवीय समानता और चर्खा-आंदोलन उनके विचार-दर्शन के प्रमुख आयाम बने। मैथिलीशरण गुप्त को हमने नवजागरण की विचारधारा का प्रतिनिधि कवि कहा है। नवजागरण स्वतंत्रता-आंदोलन और गांधीवाद के वे प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होंने गांधीवादी विचारों को स्वर दिया।

स्वदेश की महिमा गुप्तजी ने अपनी रचनाओं के अनेक प्रसंगों में गाई। ''गुरुकुल'' में गुरू गोबिन्द सिंह के मुख से देश के गौरव का गान इस तरह से किया है-

जिसके तीन ओर अर्णव है,
चौथी ओर हिमालय पीन
ऐसा देश दुर्ग पाकर भी
रह न सके हा! हम स्वाधीन।

(गुरुकुल, पृं. 220)

''स्वदेश संगीत'' में गुप्तजी की कविता नीलाम्बर परिधान हरित पट पर शोभित है। स्वतंत्रता आंदोलन के युग में भारतीय जनता के कोटि-कोटि कण्ठों से गायी जाती थी। मातृभूमि को देवी अथवा मानवी रूप में अनेक कवियों ने चित्रित किया, जैसे बंकिमचन्द्र चटर्जी ने ''वन्देमातरम्'' गीत में, निराला ने ''भारति जय विजय करे'' गीत में और जय

शंकर प्रसाद ने ''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से..... ''कविता में। प्राचीन काल के कथानकों में भी गुप्तजी ने स्वदेश प्रेम और राष्ट्रीय भावना को इस कौशल से अभिव्यक्त किया है कि वह उन प्रसंगों में अपनी सार्थकता रखते हुए आज के युग की भावनाओं को भी वाणी देने में समर्थ है। विदेशी शक्ति से देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए ''साकेत'' के राम कृत संकल्प है-

पुण्य भूमि पर पाप कभी हम सह न सकेंगे
पीड़क पापी यहाँ और अब रह न सकेंगे

(लीला, पृं. 24)

इसी प्रकार, ऐतिहासिक प्रसंगों पर आधारित रचनाओं में गुप्तजी ने अनेक पात्रों के द्वारा स्वदेश के लिए बलिदान की भावना व्यक्त की है। गुप्तजी की ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित अनेक रचनाओं के स्वदेश के लिए प्राणार्पण की भावना व्यक्त होती है। उन मध्यकालीन कथानकों में यह भाव सीमित राष्ट्रीयता की भावना को व्यक्त करते हैं, लेकिन वर्तमान युग में भी उन भावनाओं की प्रासंगिकता थी-

जन्मदायी धायि! तुझसे उऋण अब होना मुझे,
कौन मेरे प्राण रहते देख सकता है तुझे,
मैं रहूँ चाहे जहाँ, हूँ किन्तु तेरा ही सदा,
फिर भला कैसे न रक्खूँ ध्यान तेरा सर्वदा

(रंग में भंग, पृं. 29)

विदेशी शासन के विरोध में स्वतंत्रता आंदोलन ने संघर्ष का रूप धारण कर लिया था। ऐसी स्थिति में गुप्तजी की राष्ट्र-प्रेम की भावना से लिखा गया काव्य ''भारत भारती'' प्रकाशित हुआ। ब्रिटिश शासन द्वारा किये जा रहे देश के आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक ह्रास के प्रति गुप्तजी अत्यधिक चिंतित थे, यह चिंता उनके इस काव्य में अनेक प्रसंगों में व्यक्त होती है। वे कहते हैं-

हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।

देशवासियों अपने प्राचीन गौरव का स्मरण करके पुनः वैसी ही या उससे बेहतर स्थिति प्राप्ति की लालसा रखें इसलिए गुप्तजी भारत भारती द्वारा जन-चेतना जगाने के कार्य में जुटे रहे-

इस देश को है दीनबन्धों! आप फिर अपनाइए,
भगवान! भारतवर्ष को फिर पुण्यभूमि बनाइए।

वरमंत्र जिसका मुक्ति था, परतंत्र पीड़ित है वही,
फिर वह परम पुरुषार्थ इसमें शीघ्र ही प्रकटाइए।

(भारत भारती, पृं. 187-188)

फिर अपने को याद करो
उठो अलौकिक, भाव करो।

(वैतालिक)

गुप्तजी राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों की एकता के महत्व को अनुभव करते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने ''काबा और कर्बला'' तथा ''गुरूकुल'' दो काव्य संग्रहों की रचना द्वार इस्लाम धर्म और सिक्ख धर्म के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है। ''मातृ-मंदिर'' नामक कविता में सभी धर्म, जाति, संप्रदाय की एकता का प्रतिपादन करते हुए वे कहते हैं- जाति, धर्म या संप्रदाय का, नहीं भेद व्यवधान यहाँ एक ने सब के लिए भेजे यहाँ निज ग्रंथ हैं। राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म बाधक नहीं है बल्कि धर्म या संप्रदाय का, नहीं भेद व्यवधान यहा'। एक ने सब के लिए भेजे यहाँ निज ग्रंथ हैं। राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म बाधक नहीं है बल्कि धर्म का उद्देश्य विश्व-बन्धुत्व भावना बढ़ाने का होना चाहिए।

किन्तु हमारा लक्ष्य, एक अम्बर, भू-सागर,
एक नगर-सा बने विश्व, हम उसके नगर!

(राजा-प्रजा)

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का एक और प्रमुख लक्ष्य था, सामाजिक समानता अर्थात् समाज के सभी वर्ग के लोगों के साथ समानता का व्यवहार, अछूत, हरिजन एवं पिछड़ी जातियों के लोगों का उत्थान। स्वतंत्रता आंदोलन के कर्णधार गांधी जी ने यह जान लिया था कि जब तक सभी वर्ण के लोगों को सामाजिक समता प्राप्त न हो, तब तक देश की राजनीतिक स्वतंत्रता कठिन ही नहीं व्यर्थ भी है। इसीलिए स्वतंत्रता संग्राम के रचनात्मक कार्यक्रमों में हरिजनोद्धार को महत्वपूर्ण स्थान दिया और इसके लिए व्यापक कार्यक्रम तैयार किए। गुप्तजी ने अपनी रचनाओं में बार-बार ''जन्मना जाति सिद्धांत'' का अर्थात् जन्म के आधार पर जाति निश्चित होने का विरोध किया है। वे कर्म और आचरण को व्यक्ति की सामाजिक मर्यादा का आधार मानते हैं। ''अनघ'' काव्य में मघ के अछूतोद्धार के प्रयासों की ग्रामवासी आलोचना करते हैं, तब उन्हें मघ द्वारा यह उत्तर दिया जाता है-

इसका भी निर्णय हो जाए, नहीं अछूत मनुज क्या हाय!
करें अशुचिता सबकी दूर, उनसे घृणा करें सो क्रूर।
जिनके बल पर खड़ा समाज, रहती है शुचिता की लाज
उनका ऋण न करना, खेद! है अपना ही मूलाच्छेद।

(अनघ, पृं. 45-46)

अछूतों के मंदिर-प्रवेश के प्रश्न को ध्यान में रखते हुए गुप्तजी ने इसे कुछ बदले हुए रूप में ''सिद्धराज'' में उठाया है। सिद्धराज की माता को यह जानकर अत्यंत खेद होता है कि मंदिर प्रवेश सबके लिए उपलब्ध नहीं है। वह बिना दर्शन किए ही लौट आती है और मंत्री के पूछने पर स्पष्ट कह देती है-

मंदिर का द्वार जो खुलेगा सबके लिए
होगी तभी मेरी वहाँ विश्वंभर भावना।

आप देखेंगे कि राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार की आकांक्षा गुप्तजी के काव्य के दो प्रमुख स्वर थे। जिसकी अभिव्यक्ति उनके प्रत्येक काव्य रचना में हुई है। राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय चेतना का प्रसार उनके जीवन का उद्देश्य मात्र बन गया था। जीवन के पचास वर्ष लेखन कार्य में निरंतर कार्यरत रहने के पीछे देश की स्वतंत्रता, देश की प्रगति और विकास को देखेते हुए स्वप्न थे, जोकि गुप्तजी के सामने ही पूर्ण हुए और इस महान राष्ट्रकवि के इस देश कार्य को पूर्णत्व प्राप्त हुआ है।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर संक्षेप में लिखिए।

1. भारतीय नवजागरण की चेतना का विकास राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया। स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. निम्नलिखि में से जा सही है उन पर (✓) निशान लगाइए।

i) राष्ट्रीय आंदोलन

ii) सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना का विकास

iii) आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का विकास

iv) विज्ञान के प्रति आस्था

v) अंधविश्वास आदि से मुक्ति का प्रयास।

3. रिक्त स्थान में उपयुक्त शब्द भरिए।

1. सामाजिक प्रथाओं का विरोध किया गया।

(बालविवाह, अनमेल विवाह, पर्दा-प्रथा, छुआछूत, सती प्रथा)

बोध प्रश्न 2

1. गुप्तजी ने अपने लेखन में किन-किन बातों पर बल दिया (किन्हीं उपयुक्त पाँच पर (✓) निशान लगाइए।

- अतीत चित्रण
- वर्तमान दुर्दशा का चित्रण
- गौरवपूर्ण इतिहास
- पौराणिक/ऐतिहासिक कथानक
- उज्वल भविष्य की आकांक्षा
- हिन्दू धर्म, वेदों, उपनिषदों का आख्यान

2. गुप्तजी ने अपनी किन-किन रचनाओं में इतिहास के उपेक्षित नारी पात्रों को प्रतिष्ठित किया है। (सही रचनाओं पर (✓) निशान लगाइए।

- साकेत
- यशोधरा

- द्वापर
- रंग में भंग
- विष्णुप्रिया
- जयिनी

3. गुप्तजी ने विभिन्न धर्म और संप्रदायों की परस्पर एकता को बढ़ाने के लिए किन महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है (संक्षेप में लिखिए)। (दस पंक्तियों में लिखें)

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4. जाति प्रथा को नष्ट करने के लिए किन प्रयासों की ओर गुप्तजी ने संकेत किया (सही पर निशान (✓) लगाइए)

- समानता
- अस्पृश्यता का विरोध
- मंदिर प्रवेश की अनुमति
- मानवीय अधिकार
- बंधुत्व का भाव

5.4 संरचना शिल्प

5.4.1 काव्य भाषा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के बाद खड़ी बोली का स्वरूप निश्चित करने और उसे दिशा देने के कार्य में पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके शिष्य मैथिलीशरण गुप्त का बहुत बड़ा योगदान है। गुप्तजी ने अपने काव्य के लिए खड़ी बोली को ही स्वीकार किया था। राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना को जनमानस तक पहुँचाने का एक प्रभावी माध्यम खड़ी बोली में रची हुई कविता को माना गया। गुप्तजी इस कार्य को पूर्ण रूप से समर्पित थे। अतः द्विवेदी युग में खड़ी बोली हिंदी राष्ट्रीय-आंदोलन की चेतना को जगाने का माध्यम बन सकी। गुप्तजी का कहना था कि राष्ट्र-भाषा के बिना देश प्रेम की चर्चा कृत्रिमता पैदा करती है। वास्तव में खड़ी बोली का यह आंदोलन तथा उत्कर्ष देश को मानसिक पराधीनता से छुटकारा दिलाने का उसी प्रकार सर्वोत्तम साधन था जिस प्रकार राजनीतिक पराधीनता की मुक्ति का साधन सत्याग्रह था। हम देखेंगे कि मैथिलीशरण गुप्त की साहित्य साधना के विकास के साथ-साथ खड़ी बोली का भी विकास होता चला गया।

अब हम गुप्तजी की भाषा के क्रमिक विकास के संबंध में विचार करते हुए देखेंगे कि ''खड़ी बोली'' उनके काव्यों में निखार पाकर किस प्रकार समृद्ध और साहित्यिक बनी है। गुप्तजी ने स्वीकार किया था कि काव्य की भाषा का आधार लोकजीवन की भाषा होनी ही चाहिए तभी वह लोक मानव के विचारों और प्रभावों को अभिव्यक्त कर सकती है। स्वयं गुप्तजी ने खड़ी बोली के संबंध में विचार व्यक्त किए थे। वे कहते हैं ''मेरी-अल्पबुद्धि तो यह कहती है कि अब खड़ी बोली में ही कविता होना सर्वथा इष्ट है। जिस हिंदी को हम राष्ट्रभाषा बनाने की कोशिश करें उसी का साहित्य कविता से खाली पड़ा रहे यह कैसे दुःख की बात है। कविता साहित्य का प्राण है। जिस भाषा में कविता नहीं, वह भाषा कभी साहित्यवती होने का गर्व नहीं कर सकती और जिस भाषा को साहित्य का गर्व नहीं, वह राष्ट्र भाषा क्या खाक हो सकती है? अतएव बोलचाल की भाषा में ही कविता होना इष्ट है''।

(मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ, पृ. 270-71)

मातृ भाषा के संबंध में उनके मन में जो वेदना थी वह इन शब्दों में प्रकट हुई है-

अहो मातृभाषे! दशा देखी तेरी,
न हो निराशा कभी दूर मेरी।
बड़ा कष्ट है तू अभी दीन ही है,
सभी भांति से हो रही हीन ही है।।

राष्ट्रभाषा के अनादर से गुप्तजी व्यथित थे। अतः खड़ी बोली की काव्य प्रतिष्ठा के लिए अत्यन्त परिश्रम और तपश्चर्या की आवश्यकता थी जो गुप्तजी की कविता में दिखाई देती है। गुप्तजी के प्रथम काव्य संग्रह ''रंग में भंग'' की कुछ काव्य पंक्तियों को देखते ही खड़ी बोली का एक स्वाभाविक रूप हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। रचना के प्रथम पद्य की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

राम नाम ललाभ जिसका सर्व मंगल धाम है,
प्रथम उस सर्वेश को श्रद्धा समेत प्रणाम है।

भाषा का जो यह स्वाभाविक और भौतिक रूप गुप्तजी के काव्य में मिलता है वह आचार्य द्विवेदी, पं. श्रीधर पाठक जी और पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय के काव्य में नहीं दिखाई देता है। इसी रचना का एक और उदाहरण देखें -

हो चुका शृंगार जब पूरा यथोचित रीति से।
ले चली वर के निकट सखियाँ उसे तब प्रीति से।।

गुप्तजी की यह रचना व्याकरण की शुद्धता और शब्दों के उचित चयन का एक उदाहरण है। ''रंग में भंग'' के बाद जयद्रथ-वध में खड़ी बोली का उससे भी अधिक सजीव और सुलझा हुआ रूप दिखाई देता है। इस काव्य में भाषा-लालित्य के साथ सर्वप्रथम खड़ी बोली का साहित्यिक रूप उभर कर सामने आया है। शब्द चयन, सूक्तियाँ, मनः स्थिति का चित्रण, तत्सम् शब्दावली और काव्यात्मक गुण इस काव्य में विद्यमान हैं। एक उदाहरण देंखें -

रहते हुए तुमसा सहायक प्रण हुआ पूरा नहीं।
इससे मुझे है जान पड़ता भाग्य-बल ही सब कहीं।।
श्रीकृष्ण के सुन वचन अर्जुन क्रोध से जलने लगे।
सब शोक अपना भूलकर करतल युगल मलने लगे।।

भाषा को सशक्त बनाने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग भी गुप्तजी ने किया। ''भारत भारती'' में अत्यंत सरल भाषा का प्रयोग किया जिसमें बोल-चाल की सामान्य

शब्दावली स्वतः ही आ गई है। यही कारण है कि उस युग में भारत भारती इतनी अधिक लोकप्रिय हुई। ''हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी'' इस रचना की यह पंक्ति व्यक्ति गा उठता था। गुप्तजी ने खड़ी बोली को काव्योपयोगी बनाकर सुधड़ रूप प्रदान किया। खड़ी बोली के स्वरूप-निर्धारण में उनका योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। गुप्तजी ने बोलचाल की सरल भाषा का प्रयोग भारत भारती में किया है। कुछ उदाहरण देखिए-

नर-जाति की जननी तथा शुभ शान्ति की स्त्रोतस्विनी
हा देव। नारी जाति की कैसी यहां है दुर्गती।

(भारत भारती)

कोई जगत को सत्य कोई स्वप्न मात्र बता रहा
कोई शकुनि उनमें वहां मध्यस्थ भाव जता रहा

गुप्तजी ने भारतीय गौरव, वीरता और आदर्श को खड़ी बोली के माध्यम से प्रस्तुत कर जनमानस में राष्ट्रीय भावना जगाने का प्रयत्न किया। उनकी यह दूरदर्शिता ही थी कि उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों को त्यागकर बदलती हुई परिस्थिति को देखते हुए खड़ी बोली को अपनाया और जीवन भर खड़ी बोली के उत्कर्ष के लिए कार्यरत रहे।

गुप्तजी की भाषा का निखार ''साकेत'' और ''यशोधरा'' में हम देख सकते हैं। इन दो रचनाओं में गुप्तजी के विचारों की गहनता और अभिव्यक्ति की उत्कृष्टता प्रकट हुई है। मानव मन की विभिन्न मनोदशाओं को दर्शाने के लिए उचित शब्दों का प्रयोग किया है। ''साकेत'' की रचना में गुप्तजी खड़ी बोली के माध्यम से व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक भावों को चित्रित करने में एक सिद्धहस्त कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं। मन्थरा की सीख मानकर कैकेयी का यह रूप कितना भयानक और स्वाभाविक है-

उठी तत्क्षण कैकेयी कांप, अधर दंशन करके कर चांप।
अन्त में सारे अंग समेट, गई वह वहीं भूमि पर लेट।।

कैकेयी के क्रोध और असन्तोष का चित्रण गुप्तजी ने ''अधर-दंशन'' तथा ''अंग समेटना'' आदि शब्दों के प्रयोग द्वारा प्रस्तुत किया है।

उर्मिला को लक्ष्मण को यह कहना कि-

''मेरे उपवन के हरिण आज वनचारी।
मैं बांध न लूंगी तुम्हें तजो भय भारी।।

इन पंक्तियों में उर्मिला की भावनाओं की अत्यंत सरल अभिव्यक्ति है। प्रत्येक प्रकार के भाव को भाषा की परिधि में बांधने की क्षमता गुप्तजी की लेखनी में दिखाई देती है। इसी तरह, ''यशोधरा'' की रचना द्वारा ''यशोधरा'' के जीवन को भी भारतीय आदर्शों और मानवीय प्रवृत्तियों के आधार पर प्रस्तुत किया है।

''दीन न हो गोपे, सुनो हीन नहीं नारी कभी।''

कहकर नारी की हीनता को अमान्य सिद्ध कर दिया, क्योंकि वह तो पूज्य है।

''अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आंचल में है दूध और आंखों में पानी''।

इन पंक्तियों द्वारा गुप्तजी ने भारतीय नारी के आसुंओं और उसकी पीड़ा का वास्तविक रूप प्रस्तुत किया है। हम देखेंगे कि खड़ी बोली के विकास का स्वाभाविक रूप यशोधरा में दिखाई देता है। गुप्तजी ने नारी का महत्व व्यक्त करने के लिए ''गोपा बिना गौतम भी

ग्राहय नहीं मुझको'' इस उक्ति का सार्थक प्रयोग किया है। ''क्या भाग रहा हूं भार देख! तू मेरी ओर निहार देख। मैं त्याग चला निस्सार देख''।

इन पंक्तियों में सार्थक शब्दों का यथास्थान और यथा-अवसर प्रयोग किया है। गुप्तजी ने संस्कृत शब्दों का प्रचुर प्रयोग भी बार-बार किया है परन्तु उनकी भाषा संस्कृत-बहुला नहीं है। तद्भव और तत्सम शब्दों का प्रयोग उनकी रचनाओं में मिलता है- उदाहरण शब्द का एक उदाहरण देखिए-

भर गया भिनय पुराधिष्ठामि,
रतिमुखाब्ज तिमिराम्बोधिस मुद्धृता।

कुछ अप्रचलित संस्कृत शब्दों का प्रयोग भी गुप्तजी ने किया है। जैसे अरून्तुद, त्वेश, आस्य आदि। गुप्तजी ने साकेत में कुछ देशज शब्दों का प्रयोग किया है जो बोलचाल के शब्द है और ब्रजभाषा, बुन्देलखंडी, अवधी आदि में प्रचलित भी थे- जैसे मचिया, डिढौना, धुंवाधार, निगोड़ी, जल लौं, सहेजा, जूझना इत्यादि। गुप्तजी ने छोटे-छोटे समास वाले पदों के साथ-साथ दीर्घ सामासिक पदों का भी प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखें-

1. कवि की मानस- कोश विभूति- विहारिणी
2. जन-सिन्धु तरंग चेष्टितः।
3. निविराम्बोधि समृद्धृता मही।

गुप्तजी ने सूर, तुलसी और भारतेन्दु की परम्परा को अपनाकर अपनी रचनाओं में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग व्यापक रूप में किया है। इसका कारण था अपनी भाषा को लोक-मानस तक पहुंचाना। लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग भाषा को सशक्त तथा उसमें सौंदर्य लाने हेतु भी किया है। कुछ उदाहरण देखें-

आश्चर्य है घर में उन्होंने सिन्धु को है भर दिया

(भारत-भारती)

सामने से हट अधिक न बोल, द्विजिह्वे
रस में विष मत घोल

(साकेत)

मेरी मलिन गूंदड़ी में भी है राहुल -सा लाल।

(यशोधरा)

इसके अतिरिक्त धूल भरे हीरे, मन मारना, प्राणों पर खेलना, लहू बहाना, कागजी घुड़दौड़ आदि अनेक मुहावरों का आकर्षक प्रयोग किया है। गुप्तजी ने भाषा का सौन्दर्य बढ़ाने के लिए साथ-साथ भाषा में प्रवाह निर्माण करने हेतु लोकोक्तियों का प्रयोग किया है। कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों के वास्तविक रूप में थोड़ा परिवर्तन भी किया है लेकिन उससे उनकी भाषा के सौन्दर्य और शुद्धता में कमी नहीं आई है। गुप्तजी ने कुछ लोकोक्तियों का प्रयोग काव्य को अधिक बोधगम्य और सामान्य जन के समझने के लिए किया है। जैसे-

सिंह और मृग एक घाट पर पानी पीते हैं।
एक-एक दो हुए उन्हें एकादश जाने।
पापी जन का पाप उसी का भक्षक होगा।

इस तरह, हम देखते हैं कि गुप्तजी के काव्य का मुख्य उद्दश्य जनमानस तक पहुंचकर उनमें चेतना जगाना था।

गुप्तजी की प्रवृत्ति प्रबंध काव्य की ओर रही है। उनकी दो रचनाएँ ''साकेत और ''यशोधरा'' प्रबंधात्मक है। परन्तु उनके प्रबंध काव्य परम्परागत प्रबंध काव्यों से अलग हैं। उनके काव्य के नायक, संघर्षशील और वीर होते हुए भी जन-सामान्य के एक प्रतिनिधि के रूप में उभरते हैं। वे अधिक मानवीय हैं। उनके प्रबंध काव्यों में गीतात्मक प्रवृत्ति अधिक है। गुप्तजी ने संवाद शैली के द्वारा प्रबंध काव्य को गति प्रदान की है। संवादों की सहायता से विषयवर्णन सजीव और आकर्षक हो गया है। ''साकेत'' में उर्मिला-लक्ष्मण संवाद और कैकेयी-मंथरा संवाद ''यशोधरा'' में यशोधरा-संवाद, महत्वपूर्ण संवादों के उदाहरण हैं। संवाद का एक उदाहरण इस प्रकार है-

''शुभे तुम्हारे कौन उभय ये श्रेष्ठ हैं?
गोरे देवर, श्याम उन्हीं के ज्येष्ठ हैं।

काव्य शैली के बाद हम अलंकार और छंद के बारे में विचार करें।

अलंकार योजना :गुप्तजी का काव्य अलंकारों की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। उन्होंने काव्य सौंदर्य की वृद्धि के लिए शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का ही प्रयोग किया है। उनकी रचनाओं का कला पक्ष अलंकारों की समुचित योजना से समृद्ध है। कुछ उदाहरण देखिए-

पड़ी थी बिजली विकराल,
लपेटे थे घन जैसे बाल।

काले-काले बादलों को काले केशों की उपमा देकर रचना का सौन्दर्य द्विगुणित हो गया है।

रत्णाभरण भरे अंगों में ऐसे सुन्दर लगते थे।
ज्यों प्रफुल्ल वल्ली पर सौ सौ जुगनू जगमग जगते थे।

(पंचवटी)

इस रचना का भाव है, शूर्पणखा का शरीर पूर्ण रूप से खिली हुई लता के समान है और उस पर सोने के आभूषण जुगनुओं के समान जगमगा रहे हैं। जुगनुओं की चमक से शूर्पणखा के शारीरिक सौंदर्य की ओर भी कवि ने संकेत किया है। गुप्तजी द्वारा रूपक, श्लेष, व्यतिरेक, विरोधाभास, अनुप्रास इत्यादि अलंकारों का प्रयोग काव्य सौंदर्य को बढ़ाता है और भावाभिव्यक्ति में सहायक होकर कवि-कौशल का परिचय देता है।

गुप्तजी की भाषा विशेषताओं को देखने के बाद हम उनकी भाषा शैली को भी देखें।

5.4.2 काव्य शिल्प

छन्द योजना

गुप्तजी का समस्त साहित्य छन्दबद्ध है। उन्होंने विशेष रूप से लयात्मक, शास्त्रीय छन्दों का प्रयोग किया है। ''यशोधरा'' में उन्होंने ''चम्पू'' पद्धति भी अपनाई है और सिद्धराज, विष्णुप्रिया में मुक्त छन्द की रचनाएं भी की हैं। स्वयं गुप्तजी ने छन्द के बंध को काव्य के लिए संयम ही समझा और उस मर्यादा का पालन गुप्तजी ने अपने काव्य के अंतर्गत किया है। छंद कविता की गति को व्यवस्थित ही करते हैं। ''यशोधरा'' का एक उदाहरण देखिए, जिसमें रोला छंद का प्रयोग किया गया है।

1. रोना गाना बस यही जीवन के दो अंग।
   एक संग मैं ले रही दोनों का रस रंग।।

2. सिद्धि हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात।
पर चोरी चोरी गये यही बड़ा व्याघात।।

(यशोधरा)

एक गीतिका छंद का उदाहरण भी देखिए-

1. लोक शिक्षा के लिए अवतार जिसने था लिया।
निर्विकार निरीह होकर नर सदृश कौतुक किया।।

2. राम नाम ललाम जिसका सर्व मंगल धाम है।
प्रथम उस सर्वेश का श्रद्धा समेत प्रणाम है।।

(रंग में भंग)

गुप्तजी ने विविध छंदों का सफल प्रयोग किया है । इस सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र ने कहा है-

''इतने प्रकार के छंदो का प्रयोग करना तो कठिन नहीं है परन्तु सर्वत्र प्रसंग का ध्यान रखना और प्रत्येक छंद को पूर्ण सफलता से प्रयुक्त करना कौशल का परिचायक है।''

खड़ी बोली में काव्य सृजन करते समय गुप्त जी ने जो छंदों का आधार अपनाया, वह उनकी समस्त काव्य रचना में निरंतर चलता ही रहा । इस प्रकार उनकी भाषा-शैली को ''छंदोबद्ध शैली'' में भी कहा जा सकता है। छंदोबद्धता के कारण उनकी भाषा में तोड़-मरोड़ की त्रुटियों और आवृत्ति का दोष भी मिलता है परन्तु उन्होंने भाषा की शुद्धता और प्रसाद -गुण का पूरा-पूरा ध्यान रखा है।

गुप्तजी की काव्य शैली का विस्तृत अध्ययन करने बाद यह भी देखना आवश्यक है कि गुप्तजी के काव्य पर संस्कृत के अलावा और कौन-कौन सी भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। आचार्य द्विवेदी के शिष्य के रूप में गुप्त जी ने काव्य रचना का आरम्भ किया था तब खड़ी बोली पर कर्कशता का दोष लगाया जा रहा था। ''रंग में भंग'' और ''जयद्रथ वध'' के निर्माण के बाद गुप्तजी ने खड़ी बोली के शब्दों की कोमलता और सरसता की ओर ध्यान दिया। इसी समय बंगाल में रवीन्द्र नाथ ठाकुर के काव्य की चर्चा थी और उन्हें अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। स्वभावतः गुप्तजी का ध्यान बंगला काव्यों की ओर आकर्षित हुआ। बंगला के चार काव्य ग्रंथों का अनुवाद उन्होंने खड़ी बोली में प्रस्तुत किया।

इन अनुवादों की कोमल, कर्णप्रिय शब्दावली का प्रभाव गुप्तजी की विकटभट, सिद्धराज और विष्णुप्रिया आदि रचनाओं की भाषा पर स्पष्ट दिखाई देता है। बंगला के अलावा गुप्तजी की भाषा पर संस्कृत का भी गहरा प्रभाव रहा है। संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग उनके काव्य में विशेष रूप से दिखाई देता है। कालिदास की रचना वसन्त वर्णन का गुप्तजी ने खड़ी बोली में अनुवाद किया।

कुछ अंग्रेज़ी कविताओं का भी उन्होंने हिंदी में अनुवाद किया है। उनके काव्य पर अंग्रेज़ी का सीधा प्रभाव नहीं दिखाई देता, लेकिन कुछ अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग उन्होंने कविता में किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुप्तजी ने अन्य भाषाओं के केवल उन्हीं प्रभावों को ग्रहण किया जिससे खड़ी बोली को प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली के माध्यम से उन्होंने भारतीय अतीत को प्रस्तुत करके जन-जन तक राष्ट्रीयता का संदेश पहुंचाया।

बोध प्रश्न 3

खड़ी बोली को हिंदी साहित्य की भाषा के रूप में स्थापित करने के लिए गुप्तजी अपने लेखन में देशज शब्दों, प्रादेशिक बोलचाल के शब्दों, मुहावरे और कहावतों का प्रयोग किया है। इनमें से प्रत्येक के दो-दो उदाहरण दीजिए।

1. देशज शब्द

   1) ..... 2) .....

   3) ..... 4) .....

2. बोलचाल के शब्द

   1) ..... 2) .....

   3) ..... 4) .....

3. मुहावरे और कहावतें

   1) ..... 2) .....

अभ्यास

1. खड़ी बोली आंदोलन द्वारा गुप्तजी ने देश को मानसिक पराधीनता से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया। इस बारे में अपने विचार दस पंक्तियों में लिखिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

5.5 सारांश

भारतीय नवजागरण के कारण हिंदी (साहित्य) काव्य में जिन विभिन्न प्रवृत्तियों का विकास हुआ था उन सभी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति हम गुप्तजी के काव्य में देख चुके हैं। इन्हीं प्रवृत्तियों के आधार पर हम गुप्तजी के काव्य का मूल्यांकन करेंगे।

भारतीय नवजागरण के परिणामस्वरूप जिन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, और साहित्यिक मूल्यों का विकास हुआ, उन सभी की अभिव्यक्ति गुप्तजी के काव्य में हुई है। सर्वप्रथम भारत के स्वतत्रंता आंदोलन को आगे बढ़ाने और राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के उद्देश्य से गुप्तजी ने भारत-भारती काव्य की रचना की। इस काव्य रचना के माध्यम से भारतीय जनता के समक्ष अपने भव्य और उज्वल अतीत का चित्र प्रस्तुत करके देशवासियों के मन में देश की स्वाधीनता की भावना को जगाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया। उत्तर भारत में गुप्तजी का भारत भारती काव्य इतना अधिक लोकप्रिय हुआ कि पाठशालाओं में छात्र और सत्याग्रही आंदोलनों में इनके पद्य गाते थे। गुप्तजी की अन्य काव्य रचनाओं में जैसे द्वापर, साकेत, जयद्रथ वध, सिद्धराज भी ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों के आधार पर भारतीय अतीत की भव्यता का चित्रण करते हैं। भारतीय जन-मानस में दश-प्रेम की भावना को जगाने हेतु गुप्तजी ने ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों का आधार लिया।

गुप्तजी का हिन्दू धर्म और वैष्णव धर्म परम्परा में विश्वास था। परन्तु उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न धर्म और सम्प्रदायों का महत्व प्रतिपादन करने के उद्देश्य से ''काबा'' और ''कर्बला'' नाम से दो खंड काव्यों की रचना की और सिक्ख धर्म के गुरूओं के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए ''गुरुकुल'' काव्य की रचना की। सर्वधर्मसमभाव के तत्व को गुप्तजी ने पूर्ण रूप से आत्मसात कर लिया था। उनकी दृष्टि में राष्ट्रीयता और विश्व प्रेम में धर्म कोई बाधा नहीं है। समाज के सभी वर्गों के लोगों की समानता और स्वतंत्रता का प्रतिपादन गुप्तजी ने अपने ''स्वदेश संगीत'' और साकेत तथा सिद्धराज काव्य रचनाओं में किया है। गुप्तजी ने जन्म के आधार पर जाति के निश्चित होने का विरोध किया है और कर्म तथा शील को सामाजिक मर्यादा का आधार माना है। समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों के उत्थान के लिए कार्य करने की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधारवादी आंदोलन के फलस्वरूप समाज में नारी की अपमानजनक स्थिति और उसके मर्यादित अधिकारों के प्रति लोगों ने सोचना शुरू किया। पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, सती प्रथा आदि का विरोध होने लगा और स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह को प्रोत्साहन दिया जाने लगा। स्त्री-पुरुष समानता की भावना दृढ़ होने लगी। स्वतंत्रता आंदोलन में नारी की सक्रियता पर जोर दिया जाने लगा। गुप्तजी ने अपनी महत्वपूर्ण रचनाएँ ''यशोधरा'' और ''साकेत'' में नारी के महत्व और उसके आदर्शों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। ''विष्णुप्रिया'' में मध्यवर्गीय परिवार की सहनशीलता, प्रतिपरायण और गृहस्थ नारी का चित्रण किया है।

गुप्तजी ने राष्ट्रीय चेतना, धार्मिक एकता, देश प्रेम और विश्व-बंधुत्व की भावना को बढ़ाने का प्रयास किया है। साथ ही साथ शोषण के विरूद्ध भी आवाज़ उठाई है। किसानों की दुर्दशा के प्रति उन्होंने केवल सहानुभूति ही व्यक्त नहीं की है बल्कि राज्य व्यवस्था और सरकारी नीति के विरूद्ध विरोध की आवाज भी उठाई है। मार्क्सवादी विचारधारा को आधार मानकर प्रगतिशील चेतना का गुप्तजी ने ''जयिनी'' नामक काव्य रचना द्वारा उद्घोष किया है। श्रमजीवियों की समस्याओं की ओर भी उन्होंने संकेत किया है। उस समय की प्रत्येक सामाजिक समस्या के प्रति एक सजग रचनाकार की भांति गुप्तजी ने अपनी आवाज़ उठाई है।

गुप्तजी ने ''यशोधरा'' नामक रचना में बौद्ध मत के सभी सांस्कृतिक सन्दर्भों को स्पष्ट किया है, जिसके आधार पर बौद्ध मत की वैदिक मत से भिन्नता स्पष्ट हो जाती है। वेदों के आधार पर यज्ञ आदि कर्मकांडों में पशु बलि के रूप में उस समय जो हिंसा हो रही थी उसके विरोध में बौद्ध मत ने अहिंसा का मार्ग अपनाया। गुप्तजी ने बौद्ध मत के इस महत्वपूर्ण मार्ग को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति दी है और वैदिक हिंसा का कटाक्ष भी किया है। उन्होंने मानवता की महत्ता और समानता में अटूट विश्वास प्रकट किया है।

गुप्तजी के आविर्भाव के समय राष्ट्रीय चेतना का विकास, प्रारंभ हुआ था। सामाजिक दृष्टि से सुधारवादी आंदोलन की लहर बल पकड़ रही थी। साहित्यिक दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी भावनाओं का विकास और नैतिक मूल्यों की स्थापना होने लगी थी। मैथिलीशरण गुप्त का काव्य उसी परम्परा की कड़ी है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए काव्य भाषा के विकास में गुप्तजी के योगदान का मूल्यांकन अपेक्षित है।

नवजागरण युग की राष्ट्रीय चेतना को उभारने में खड़ी बोली का स्वर सबसे अधिक मुखर रहा है। गुप्तजी ने खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप में अपनाकर भारतीय संस्कृति का गुणगान, राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति और राष्ट्रीय गौरव तथा स्वाभिमान की भावना को दृढ़ बनाने में बहुत बड़ा योगदान दिया। जो साहित्य, ''ब्रजभाषा'' और ''अवधी'' के कारण केवल आदर्शवादी बनकर रह गया था, उस साहित्य को गुप्तजी ने जन-सामान्य की भाषा के माध्यम से यथार्थ के धरातल पर प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली के स्वरूप निर्धारण में गुप्तजी का योगदान महत्वपूर्ण है। बोलचाल की भाषा का स्वाभाविक रूप और चित्रमय

भाषा का प्रयोग करके गुप्तजी ने काव्यात्मक चित्र प्रस्तुत किए हैं। संस्कृत, ब्रजभाषा, अवधी के शब्दों का प्रयोग उन्होंने भाषा को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से किया है। प्रचलित मुहावरे और कहावतों का प्रयोग करके भाषा को समृद्ध और सुंदर बनाया। खड़ी बोली को नवीन शब्द, उनके नवीन प्रयोग और नवीन अर्थ दिया जिनका विकास हम छायावादी कवियों की कविता में स्पष्ट रूप से देखेंगे। गुप्तजी ने काव्य शैली की सभी पद्धतियों का प्रयोग किया है। प्रबंधात्मक काव्य रचना पद्धति को अपनाकर हिंदी काव्य को अनेक प्रकार की विशेषताओं और नवीनताओं से अलंकृत किया। वस्तु-विन्यास, भाव-व्यंजना, चरित्र-चित्रण, अभिव्यक्ति, अप्रस्तुत विधान, छन्द रचना और भाषा के गठन संबंधी अनेक प्रकार के सफल प्रयोग गुप्तजी के काव्य में मिलते हैं। प्रबंध काव्य में गीति पद्धति का सफलतापूर्वक निर्वाह किया। गुप्तजी ने छन्दबद्ध रचना पर अधिक ध्यान दिया है। उनकी समस्त रचनाएं छन्दोबद्ध ही हैं। लयात्मक शास्त्रीय छन्दों का उपयोग उन्होंने किया है। यशोधरा में ''चम्पू'' छन्द की पद्धति अपनाई है और सिद्धराज, ''विष्णुप्रिया'' में मुक्त छन्द की रचनाएं भी की हैं। भाषा को विशिष्ट रूप प्रदान करने के साथ-साथ काव्य शैली के अनेक रूपों का प्रयोग अपनी काव्य रचनाओं में करने का प्रयास गुप्तजी के महत्वपूर्ण योगदान माने जा सकते हैं। गुप्तजी के द्वारा भाषा और शैली के क्षेत्र में किए इन प्रयोगों के कारण छायावादी काव्य को अपना मार्ग बनाने में सुविधा हुई।

5.6 शब्दावली

आत्मसात : भली भांति जाना और समझा हुआ

सांस्कृतिक पुनरुत्थान : प्राचीन संस्कृति को फिर से जानने समझने, अपनाने की चेष्टा

पुनरूज्जीवन : फिर से जीवित करना

साम्प्रदायिक समन्वय : विभिन्न धर्मों और संप्रदायों का मेल

मानिनी : स्वाभिमानी नायिका

कर्ण प्रिय शब्दावली : सुनने में अच्छी लगने वाली शब्दावली

सर्व धर्म समभाव : सभी धर्मों को समान समझने की स्थिति।

5.7 उपयोगी पुस्तकें

रामविलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

मैथिलीशरण गुप्त - व्यक्ति और अभिव्यक्ति, संपादकः डॉ. सी.एल. प्रभात।

5.8 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. 20 वीं शताब्दी में नवजागरण की चेतना के कारण राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। सन् 1885 में कांग्रेस महासभा की स्थापना, बंगाल का विभाजन और स्वतंत्रता आन्दोलन के कारण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्तर ऊंचा हुआ। जिसकी प्रथम अभिव्यक्ति भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और महावीर प्रसार द्विवेदी के साहित्य में हुई। जिसने पराधीनता के बोध से स्वाधीनता के लिए प्रयत्नशील होने की चेतना जगाई।

2. i) राष्ट्रीय आन्दोलन
   ii) सामाजिक सांस्कृति चेतना का विकास
   iii) आधुनिक हिंदी काव्य चेतना का विकास
   iv) विज्ञान के प्रति आस्था
   v) अंधविश्वास आदि से मुक्ति का प्रयास
3. 1. बाल-विवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा।

बोध प्रश्न 2

1. 1) अतीत चित्रण
   2) वर्तमान दुर्दशा का चित्रण
   3) गौरवपूर्ण इतिहास
   4) पौराणिक / ऐतिहासिक कथानक
   5) उज्ज्वल भविष्य की आकांक्षा
2. i) साकेत
   ii) यशोधरा
   iii) गौरवपूर्ण इतिहास
3. 5.3.4 का भाग देखें।
4. i) समानता का भाव
   ii) अस्पृश्यता का विरोध
   iii) मंदिर प्रवेश की अनुमति
   iv) बंधुत्व भाव

बोध प्रश्न 3

1. 5.4.1 का उपभाग देखें
2. 5.4.1 का उपभाग देखें।
3. 5.4.1 का उपभाग देखें।